भारतीय स्वाधीनता आंदोलन और रामचरितमानस

ज्योति कुमारी

हिंदी का भक्ति साहित्य 13 वीं शताब्दी से लेकर 16 वीं शताब्दी तक व्यापक रूप से फैला है। वह साहित्य चाहे निर्गुण पंथ का हो या सगुण पंथ का, यह सीख तो ज़रूर देता है कि किसी मनुष्य की ग़ुलामी करने से अच्छा है - ईश्वर की ग़ुलामी करना। और फिर अगर विदेशी शासन है तो उसकी ग़ुलामी करने में तो आत्मा को बहुत ज़्यादा कष्ट मिलता है।

अपनी आत्मा की मुक्ति के लिए, अपनी अस्मिता की मुक्ति के लिए प्राणों का उत्सर्ग कोई बड़ा त्याग नहीं है। स्वाधीनता शब्द का अर्थ ही होता है कि व्यक्ति अपनी आत्मा के अधीन रहे; और आत्मा की अधीनता ही उसे शेष अधीनताओं से मुक्त करती है। चाहे वह राजा की अधीनता हो, चाहे पद की अधीनता हो, चाहे इन्द्रियों के भोग की अधीनता हो।

रामराज्य की विधि या धर्मसम्मत मर्यादा की अवधारणा केवल राजा या शासक के कर्तव्यों का विचार नहीं है अपितु एक ऐसी समग्र राज्य व्यवस्था की निर्मिति है जिसमें सामाजिक जीवन का प्रत्येक कोना धर्म के चार चरणों- सत्य, तप, दया और दान पर अवलंबित होता है। यह एक ऐसी चतुष्पाद व्यवस्था है जो राज्य और समाज के सभी आधारभूत घटकों को सच्ची श्रद्धा से ओत-प्रोत करते हुए सबकी स्वतंत्रता सुनिश्चित करती है। यह एक ऐसा ईश्वरीय राज्य है जो अकाल मृत्यु या अन्य सभी प्रकार की पीड़ा से मुक्त होगा। सभी सर्वत्र कल्याण देखेंगे। कोई दीन, दुखी, दरिद्र नहीं होगा। सभी शिक्षित, बोधसंपन्न होंगे और सभी प्रकार की शुभता से युक्त होंगे।

तुलसीदास युगदृष्टा थे। रामकथा को रामचरितमानस में पिरोकर एक ऐसा अमोघ अस्त्र दे दिया जो अकबर से लेकर औरंगजेब और अंग्रेजों तक की सत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध का एक सशक्त उपकरण सिद्ध हुआ। यही नहीं, यदि आज हम अयोध्या में भगवान श्रीराम के मंदिर-निर्माण व प्राण-प्रतिष्ठा के गौरव-क्षण तक पहुंचे हैं, तो उसके पीछे भी कहीं न कहीं तुलसीदासजी और उनके महान ग्रंथ रामचरितमानस की महती भूमिका है, जिसने हमारे आत्मतत्व को एक हजार वर्ष की गुलामी के बाद भी बचाए रखा।

गोस्वामी जी उस अकबर के समयकाल में अवतरित हुए, जिसने समाज की सभी मान-मर्यादाओं को अपने तलवार की नोक पर धूल-धूसरित कर दिया था। जिस तरह रावण के दरबार में पवन देव हवा करते, दिग्पाल दरवाजों पर पहरे देते, और भी जितने देवी-देवता, ग्रह-नक्षत्र थे, सभी रावण के यहाँ चाकरी करते थे। उसी तरह का हाल अकबर के दरबार में भारतवर्ष के राजा-महाराजाओं का था। रावण के अंतःपुर की भाँति अकबर का भी हरम बल-छल से हरी गईं श्रेष्ठ व कुलीन युवतियों से भरा था। वह जो चाहता उसे हर हाल पर पाकर रहता। दण्डकारण्य में जिस तरह त्रिशरा-खर-दूषण का आतंक था, वैसे ही अकबर के सूबेदारों का उत्तर से लेकर दक्षिण तक आतंक व्याप्त था। अकबर ने तत्कालीन मेधा को भी अपने दरबार में गुलाम बनाकर रखा था। तत्कालीन बौद्धिक समाज का बड़ा तबका इतना भयभीत था कि वह अकबर

का दरबारी बन बैठा था। तुलसीदास को भी अकबर ने अपने नवरत्नों में सम्मिलित होने का प्रस्ताव भेजा था, किंतु बाबा प्रभु श्रीराम के अलावा किसी और के आगे कहाँ झुकने वाले थे! उन्होंने उत्तर दिया -

हम चाकर रघुवीर के, पटौ लिखौ दरबार।

अब तुलसी का होहिंगे, नर के मनसबदार।।

अकबर ने 51 वर्ष तक निर्द्वन्द्व राज किया। उसे भी रावण की तरह अभिमान था कि मेरे आगे कौन ईश्वर है। वह भी इसी क्रम में जलालुद्दीन से अकबर बन बैठा। अकबर अल्लाह का विशेषण है..अल्लाह-हू-अकबर। यानि कि अल्लाह ही परमशक्ति है, महान है, दूसरा कोई नहीं। अत्याचार और तलवार की नोक पर जलालुद्दीन ही अकबर बन गया। ईश्वर का अवतार नहीं, अपितु पूरा ईश्वर। अपना एक नया धर्म भी प्रतिपादित कर लिया, हिंदू-मुसलमानों से अलग।

ऐसे भीषण और वीभत्स काल में तुलसीदास सामने आते हैं और भारतीय लोक मानस की हताश चेतना को जागृत करने के लिए लोकभाषा के अमरग्रंथ रामचरितमानस की रचना होती है। संवाद-दर-संवाद और कथोपकथन शैली में रामचरित जन-जन के मानस तक पहुँचता है। अकबर के कालखंड के इतिहास को सामने रखिए और फिर रामचरितमानस का पाठ करिए तो सीधे-सीधे बिना कुछ कहे गोस्वामी तुलसीदास संकेतों में असली मर्म समझा देते हैं।

तुलसी ने रामकथा को लोकभाषा में रचा भर ही नहीं, उसे लोकव्यापी भी बनाया।गाँव-गाँव रामलीलाएं शुरू हुईं और रामचरित मानस की चौपाइयां कोटि-कोटि कंठों में बस गईं। हताश युवाओं के सामने महावीर हुनमान, बजरंगी का चरित्र रखकर उनमें आत्मविश्वास जगाया कि जिसका कोई नहीं उसके बजरंगबली। हनुमान चालीसा की चौपाइयाँ मंत्र बनकर लोगों को निर्भय करने में सहायक हुईं। गाँव-गाँव हनुमान मंदिर और उससे जुड़ी व्यायामशालाओं ने तरुणाई में पौरुष का संचार किया।

समर्थ रामदास स्वामी ने जब छत्रपति शिवाजी महाराज को सुराज स्थापित करने का मंत्र दिया तो उसे सफल करने का तंत्र भी दिया। यह तंत्र हनुमान जी के मंदिर, उससे जुड़ी व्यायामशालाएं और वहाँ से निकलने वाले वीर तरुणों के समूह के रूप में निकला। इन्हीं वीर तरुणों के पराक्रम की वजह से शिवाजी का साम्राज्य स्थापित हुआ। इन हनुमान व्यायामशालाओं का उपयोग प्रकारांतर में बाल गंगाधर तिलक ने किया। तिलक ने ही मानस की अर्धाली 'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं' को स्वतंत्रता संग्राम का महामंत्र बना दिया।

तिलक के बाद गाँधीजी ने 'रामचरित' को पकड़ा। गाँधी जी के सपनों का रामराज कोई अलग नहीं, अपितु गोस्वामी तुलसीदास द्वारा वर्णित रामराज ही था। गाँधी के आश्रमों में राम रहे, स्वाधीनता के लिए बढ़े हर कदम पर राम की दुहाई थी, उनकी प्रार्थना में राम रहे और आखिरी श्वास में भी यही दो अक्षर रहे। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता की लड़ाई का आदर्श राम-रावण युद्ध से लिया। स्वर्णमयी लंका की भांति शोषण-दमन के प्रतीक स्वर्णमयी ब्रिटिश क्राउन के खिलाफ था। गाँधी को विश्वास था कि जिस तरह

वानर-भालू-गिद्ध-गिलहरी-वनवासियों ने मिलकर स्वर्णमयी लंका को फूँककर महीयसी सीता माता को मुक्त करा लिया। उसी तरह भारत के यही गरीब-गुरबे-शोषित-वंचित जन गोरी हुकूमत से स्वतंत्रता को मुक्त करा लेंगे।

गोस्वामी जी ने रामचरितमानस में मुक्ति-संघर्ष भर की गाथा नहीं लिखी, बल्कि उन्होंने हमारे स्वाभिमान की प्रतिष्ठा की भी बात की। राजकाज और समाज की बात की, समता और समाजवाद की भी बात की। यह भी बात की कि जिसके राज में प्रजा दुखी होती है, वह राज परम पातकी और नरक का अधिकारी होता है।

श्रीराम के राज्य में कोई अप्रसन्न न था। प्रत्येक व्यक्ति को उसके श्रम और कर्म का उचित फल प्राप्त होता था। सबके साथ न्याय होता था। न्याय और धर्म की तुला पर राजा और रंक, शीर्ष और निम्नतल के आधार पर विशेषाधिकारों का भेद न था। गोस्वामी तुलसीदास ने रामराज्य में ऐसे जीवन की कल्पना की है, ऐसे सामूहिक जीवन की कल्पना की है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति, नर-नारी अहंकार और दंभ से मुक्त हैं। सभी परिजनों को आदर देने वाले हैं। सभी में कृतज्ञता का भाव है। छल और कपट से मुक्त जीवन जीने वालों का समाज है।

वस्तुत: रामराज्य की अवधारणा ऐसे सुशासन की कल्पना है, जिसमें सबको योग्य बनने और योग्यता के अनुसार सब प्राप्त करने का अधिकार है। इसमें सर्वत्र पारदर्शिता है। किंतु, समाज के अंतिम व्यक्ति के अभ्युत्थान की चिंता प्रमुख है। अब रामराज्य की इस कल्पना में कुछ चीजें महत्वपूर्ण होकर उभरती हैं। रामराज्य में शासन कैसा होगा? उसकी चारित्रिक विशिष्टताएं क्या होंगी? सबको न्याय प्राप्त हो सके, इसकी प्रणाली क्या होगी? समाज में सबकी समानता किस प्रकार से निर्मित होगी? सामाजिक जीवन के अंतिम स्थान पर खड़े व्यक्ति की आवाज, उसकी इच्छा, आकांक्षा किस प्रकार अभिव्यक्त होगी और सर्वोच्च तक सुनी जाएगी।

महात्मा गांधी इस रामराज्य के स्वप्न को स्पष्ट करते हुए कहते हैं, 'रामायण का प्राचीन आदर्श रामराज्य नि:संदेह सच्चे लोकतंत्र में से एक है। मेरे सपनों का रामराज्य राजा और निर्धन दोनों के समान अधिकारों को सुनिश्चित करता है। मैं जिस रामराज्य का वर्णन करता हूं, वह नैतिक अधिकार के आधार पर लोगों की संप्रभुता है। वस्तुत: रामराज्य का यह स्वप्न ज्ञात इतिहास में नहीं है। हर कालखंड में संपूर्ण राजा एवं प्रजा का स्वप्न रहा है। इस स्वप्न को चरितार्थ करता हुआ जो महान कालखंड भारतीय इतिहास में सदा सर्वदा स्पृहा का विषय रहा है, वह मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का राज्य है।' 2 अगस्त, 1934 को अमृत बाजार पत्रिका में प्रकाशित लेख में गांधी जी ने कहा था कि, 'मेरे सपनों की रामायण, राजा और निर्धन दोनों के लिए समान अधिकार सुनिश्चित करती है।'

गोस्वामी तुलसीदास ने रामराज्य की कल्पना करते हुए राजा के लिए कुछ गुणों का उल्लेख किया है। यथा- लोक वेद द्वारा विहित नीति पर चलना, धर्मशील होना, प्रजापालक होना, सज्जन एवं उदार होना,

स्वभाव का दृढ़ होना, दानशील होना आदि। श्रीराम में आदर्श राजा के सभी गुण विद्यमान हैं। उनको अपनी प्रजा प्राणों से भी अधिक प्रिय है। प्रियजन, पुरजन, गुरुजन सबके प्रति राम का व्यवहार आदर्श एवं धर्म के अनुकूल है। ऐसे रामराज्य में विषमता टिक नहीं सकती और सभी प्रकार के दुखों से प्रजा को त्राण मिल जाता है। महात्मा गांधी ने जिस रामराज्य की कल्पना की है, उसका मूल आधार भी तुलसीदास जी की रामराज्य परिकल्पना ही है। निश्चय ही यह एक आदर्श शासन व्यवस्था है जिसका मूल आधार लोकहित एवं मानवतावाद है।

रामराज्य में मनुष्य और प्रकृति सभी निजधर्म का पालन करते हैं। वे सभी कल्याण के लिए उदारचेता होकर त्याग करते हैं। उनमें संग्रह की प्रवृत्ति नहीं है। इसी प्रकार के रामराज्य की कल्पना हमारे यहां है, जिसमें एक राजा से अपेक्षित है कि वह प्रेम, सद्भावना, शांति और स्वशासन की स्थापना करे।

एक राजा के रूप में जिस धर्म और मर्यादा की स्थापना भगवान श्रीराम करते हैं, महात्मा गांधी ने उसी भारत की कल्पना 'हिंद स्वराज' में की है। इसी स्वतंत्र भारत की स्थापना के लिए महात्मा गांधी ने संग्राम किया। उनके आयुध भी श्रीराम के जैसे ही थे। कोदंड धारी राम, असुर निकंदन राम, अहिंसा और करुणा का प्रतीक श्रीराम हैं। गिलहरी और खर-दूषण, मारीच, सूर्पणखा आदि को न्याय देने वाले न्यायी श्रीराम। इन सबके प्रति श्रीराम करुणामय हैं।

जब रावण से युद्ध होता है और आसुरी सभ्यता से आए विभीषण को उस युद्ध में रावण की साज-सज्जा, उसके आयुध, उसके रथ, उसकी गतिशीलता, उसकी तकनीकी को देखकर संशय उत्पन्न होता है। इसका कारण है कि विभीषण भी उसी भौतिकतावादी आसुरी सभ्यता के थे। उनके मन में संशय हो जाता है कि-

'रावनु रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा।।

अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा।।

तब श्रीराम उनका संशय दूर करते हैं। क्योंकि श्रीराम के लिए स्नेह, दया, सत्य, पवित्रता, मर्यादा, नैतिकता, करुणा, धर्म, साहस इत्यादि सद्गुण ही युद्ध के आयुध हैं। श्रीराम सिद्ध करते हैं कि युद्ध हौसलों व संकल्प से जीता जाता है, आयुध से नहीं। राममय भारत ने स्वतंत्र भारत में जितने युद्ध किए हैं, उसमें इसको चरितार्थ करके दिखाया है।

इस दुनिया को श्रेष्ठतम जीवन मूल्यों के बोध के साथ नए सिरे से नई सभ्यता रचने, नई सभ्यता को बनाने की दृष्टि प्राप्त हो सके, इसलिए जन गण मन राम, जन-जन के राम, जननायक राम, गणराज्य के राजा राम, जन गण के नायक राम, मन मानस के आनंद और सुख हेतु राम, मन चेतना में, बुद्धि में, विद्या और आनंद की स्फूर्ति में श्रीराम आदर्श राजा हैं। वह रामराज्य का राजा केवल शासन नहीं करता, जनमानस की चेतना का अंतरण करता है। केवल प्रजा के कल्याण के लिए उत्तरदायी शासक नहीं होता है, अपितु वह जन-जन को धर्म व विधि के प्रति उत्तरदायी व्यक्ति के रूप में अंतरित करता है। वह अपने

आचरण, निर्णय क्षमता और लोक कल्याण के क्रियाकलापों द्वारा शासक की अपेक्षा अपने को ऐसे नेता या आदर्श व्यक्ति के रूप में स्थापित करता है जो सरकार द्वारा चलने वाले शासन को अतिक्रांत करता हुआ जनगण की भावना को उत्प्रेरित करता है।

रामराज्य का जो स्वरूप लोक-स्मृति में है, वही शास्त्रीय चिंतन में है। जिस राम कथा से एक आदर्श राज्य व्यवस्था के रूप में रामराज्य का उदय हुआ, उसे वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक निरंतर दोहराया जाता रहा है। भारत की सभी भाषाओं में पहला महाकाव्य प्रायः रामकथा पर ही लिखा गया है। भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में रामायण की रचना हुई और वह वहां के शास्त्रीय चिंतन और लोक-स्मृति का आधार बनी। हिंदी भाषी क्षेत्र में गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस को लोक और शास्त्र दोनों जगह महत्व मिला है। उससे हम अन्य भाषाओं में रचित रामायणों के महत्व और उनकी लोकप्रियता के बारे में जान सकते हैं। वास्तव में शास्त्रीय चिंतन से निकलकर ही रामराज्य संबंधी मान्यताएं लोक-स्मृति में आई हैं।

हमारे यहां राम कथा का कितना महत्व रहा है, यह इस बात से भी समझा जा सकता है कि राम से संबंधित हमारे तीन बड़े उत्सव हैं। दीपावली 14 वर्ष के वनवास के बाद राम के अयोध्या लौटने का उत्सव है। वह रामराज्य के आरंभ का भी उत्सव है। राम-नवमी राम के जन्म का उत्सव है और उसे व्रत-पूजापूर्वक परिवार में मनाया जाता है। लेकिन दशहरा सार्वजनिक उत्सव है। दशहरा आसुरी बाधाओं की समाप्ति का उत्सव है। राम ने लंका विजय के बाद उसे विभीषण को वापस लौटा दिया था। इसलिए वह असुर सत्ता की समाप्ति नहीं है। उसे फिर से धर्म के शासन में लाना है। दशहरा हमारे सबसे पवित्र उत्सवों में गिना गया है। वह राम के पराक्रम का उत्सव है। उस दिन किसी कार्य के लिए कोई मुहूर्त देखने की आवश्यकता नहीं है। दशहरा सबसे शुभ दिन माना गया है। उसमें किया गया कोई भी कार्य मंगलकारी होगा। राम की यह त्रिविध छवि है। वे भगवान भी हैं, जिनका जन्मदिन पुण्यदायी है। वे पराक्रमी हैं, जिनकी लंका युद्ध में विजय को सबसे शुभ दिन माना गया। वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, इसलिए उन्हें एक आदर्श राज्य के अधिपति के रूप में देखा गया। इस आदर्श राज्य का आरंभ ही दीपावली के उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

भारतीय समाज की इस लोक-स्मृति से हम रामराज्य की तीन महत्वपूर्ण विशेषताओं को पहचान सकते हैं। रामराज्य धर्म का शासन है, उसका आदर्श नैतिक है, उसमें राजा और प्रजा दोनों ही धर्म द्वारा शासित होते हैं। वह प्रजा पर राजा का या राज्य का शासन नहीं है। रामराज्य की स्थापना के लिए स्वयं ईश्वर ही अवतार लेकर पृथ्वी पर प्रकट हुए थे। रामराज्य की दूसरी विशेषता यह है कि वह अपराजेय है। वह अनुलंघनीय है। वह पराक्रम में इतना ऊंचा है कि कोई उससे युद्ध करने का साहस न कर सके। वह नीति में इतना ऊंचा है कि कोई उससे युद्ध करने की इच्छा न कर सके। ऐसा शासन ही ईक्ष्वाकु वंश का संकल्प था। उसी में रघु कुल का उदय हुआ। उसी रघु कुल के प्रतापी राजा राम थे।

अयोध्या जिससे युद्ध करना संभव न हो। रामराज्य के इसी आदर्श पर भारत को अपराजेय और अयोध्य होना चाहिए। रामराज्य की तीसरी विशेषता यह है कि उसके राजा राम मर्यादापूर्वक रहते हैं। वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। उनके अनुकरण पर भारत के सभी राजाओं को मर्यादा में रहने की प्रेरणा मिलती रही है। दुनिया में अन्य सभी जगह राजा को विधि प्रदाता कहा गया है। यूरोप में तो राजा ही लॉ है। इस नाते राज्य ही लॉ गिवर है। लेकिन भारत में राज्य विधि प्रदाता नहीं माना गया था। विधि निर्माण समाज का काम है। उसकी बनाई विधि से ही मर्यादा निश्चित होती है। उन मर्यादाओं का जैसे समाज पालन करता है, वैसे ही राजा भी पालन करता है।

राजा रामचंद्र को तो मर्यादाओं का पालन करने वाले लोगों में सबसे उत्तम कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि भारत में राजा समाज के अधीन है। समाज राजा के या राज्य के अधीन नहीं है। यह साधारण बात नहीं है। विधि ही शासन का स्वरूप निर्धारित करती है। अगर विधि का निर्माण समाज की विभिन्न भौगोलिक, सामाजिक, व्यावसायिक और धार्मिक इकाइयां स्वयं कर रही हों तो इस व्यवस्था को स्व-शासन की व्यवस्था कहा जाएगा। स्वराज्य की व्यवस्था कहा जाएगा। ऐसी व्यवस्था वह है, जिसमें राज्य सत्ता किसी एक जगह केंद्रित नहीं है। पूरे समाज में व्याप्त है। राजा का काम यह व्यवस्था बनाना नहीं, समाज द्वारा बनाई व्यवस्था की रक्षा करना है। उसकी भूमिका नियंत्रण की नहीं है, नियामक की है। वह दंडाधिकारी है। उन लोगों को दंडित करता है, जो समाज की व्यवस्था का उल्लंघन करते हैं।

रामराज्य में लोग स्वतंत्र होते हैं। वे अपने तंत्र में अनुशासित होते हैं, यह अनुशासन नैतिक अनुशासन है। वह सार्वभौम सिद्धांतों पर आधारित है। उन सिद्धांतों का बोध एक लंबे अनुभव से भारतीय समाज को हुआ है। उसमें प्रधानता धर्म बोध की है, तार्किक विश्लेषण की नहीं। उसमें राजा और प्रजा सभी अपने-अपने धर्मों का पालन करते हैं। जो लोभ-मोह के वशीभूत होकर उस अनुशासन का उल्लंघन करते हैं, वे लोक और राज्य द्वारा निंदित और दंडित होते हैं। यह अनुशासन सर्वानुमति पर आधारित है। उसमें पूरे समाज की सहभागिता है। पूरे समाज की स्वीकृति है। उसी से समाज समर्थ बनता है। उसका यह सामर्थ्य राज्य की भी शक्ति बनता है। राज्य का मुख्य दायित्व बाहरी शक्तियों से देश की रक्षा करना है।

संदर्भ सूची

1. रामचरितमानस (तुलसीदास कृत) टीकाकार –हनुमान प्रसाद पोद्दार
2. वागर्थ (पत्रिका) अंक 272, मार्च 2018, पृष्ठ संख्या 95।
3. वही।
4. वही।
5. वागर्थ (पत्रिका) अंक 272, मार्च 2018, पृष्ठ संख्या 94।

6. ठाकुर रवीन्द्रनाथ टैगोरः पोएम्स ऑफ कबीर, मैकमिलन, न्यूयार्क, 1915 पृष्ठ संख्या 13।

7. सिंह गोपेश्वरः भक्ति आंदोलन और काव्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या 31।

8. गांधीजी,हिन्दस्वराज(अनुवादक अमृतलाल ठाकोरदास नाड़ावटी) नवजीवन प्रकाशन मंदिर,अहमदाबाद, संस्करण 2005, पृष्ठ संख्या 39।

9. वही, पृष्ठ संख्या 37।

10. हौली जॉन स्ट्रेटन : भक्ति के तीन स्वर (अनुवाद- अशोक कुमार) राजकमल प्रकाशन, 2019, पृष्ठसंख्या 79।

11. सांचा (पत्रिका) अंक जून-जुलाई 1988, पृष्ठ संख्या 73।

12. सिंह गोपेश्वरः भक्ति आंदोलन और काव्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या 57।

13. तिवारी विश्वनाथ प्रसाद, 'कुछ है', प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 47।

ज्योति कुमारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, कॉलेज ऑफ़ वोकेशनल स्टडीज़,

दिल्ली विश्वविद्यालय

ईमेल - singhjyoti.ip@gmail.com